कसबे का आदमी

कमलेश्वर

कसबे का आदमी

सुबह पाँच बजे गाड़ी मिली। उसने एक कंपार्टमेंट में अपना बिस्तर लगा दिया। समय पर गाड़ी ने झाँसी छोड़ा और छह बजते-बजते डिब्बे में सुबह की रोशनी और ठंडक भरने लगी। हवा ने उसे कुछ गुदगुदाया। बाहर के दृश्य साफ़ हो रहे थे, जैसे कोई चित्रित कलाकृति पर से धीरे-धीरे ड्रेसिंग पेपर हटाता जा रहा हो। उसे यह सब बहुत

भला-सा लगा। उसने अपनी चादर टाँगों पर डाल ली। पैर सिकोड़कर बैठा ही था कि आवाज़ सुनाई दी, "पढ़ो पटे सित्तारम स़ित्तारम. . . "

उसने मुड़कर देखा, तो प्रवचनकर्ता की पीठ दिखाई दी। कोई ख़ास जाड़ा तो नहीं था, पर तोते के मालिक, रूई का कोट, जिस पर बर्फ़ीनुमा सिलाई पड़ी थी और एक पतली मोहरी का पाजामा पहने नज़र आए। सिर पर टोपा भी था और सीट के सहारे एक मोटा-सा सोंटा भी टिका था। पर न तो उनकी शक्ल ही दिखाई दे रही थी और न तोता। फिर वही आवाज़ गूँज उठी, "पढ़ो पटे सित्तारम सित्तारम. . ."

सभी लोगों की आँखें उधर ही ताकने लग गईं। आख़िर उससे न रहा गया। वह उठकर उन्हें देखने के लिए खिड़की की ओर बढ़ा। वहाँ तोता भी था और उसका पिंजरा भी, और उसके हाथ में आटे की लोई भी, जिससे वे फुरती से गोलियाँ बनाते जा रहे थे और पक्षी को पुचकार-पुचकारकर खिलाते जा रहे थे। पर तोता पूरा तोता-चश्म ही था। उनकी बार-बार की मिन्नत के बावजूद उसका कंठ नहीं फूटा। गोलियाँ तो वह निगलता जा रहा था, पर ईश्वर का नाम उसकी ज़बान से नहीं फूट रहा था। लौटते में एक नज़र उसने उन पर और डाली, तो लगा, जैसे चेहरा पहचाना हुआ है।

वह अपनी सीट पर आकर बैठ गया। दिमाग़ पर बहुत ज़ोर डाला पर याद नहीं आया। तभी उन्होंने तोते की ओर से दृष्टि हटाकर शिवराज की ओर देखा, अंगूठा और तर्जनी निरंतर एक रफ़्तार से अब भी गोली को शक्ल प्रदान कर रहे थे। माथे पर लहरें डालते हुए और आँखों को गोल कर कुछ अजीब निरीह-सा मुँह बनाकर वे शिवराज को संबोधित करते हुए बोले, "शिब्बू शिवराज है न तू?"

और अपना नाम उनके मुँह से सुनते ही उसे सब याद आ गया। ये तो छोटे महराज हैं।

वे जाति के वैश्य थे, पर कर्म के कारण महराज पुकारे जाने लगे थे। म्युनिसिपालिटी की दूकानों के पासवाली इमली के नीचे बैठकर वे पानी पिलाया करते थे। क़स्बे की सबसे रौनकदार जगह वही थी। वहीं कुएँ पर छोटे अपनी टाँगें तोड़े, जाँघ तक धोती सरकाए, जनेऊ डाले, चुटिया फहराए, नंगे बदन टीन की टूटी कुरसी पर जमे रहते। गाँववाले पानी पीकर एक-आध पैसा उनके पैरों के बीच उसी कुरसी पर रखकर चल देते। पैसा पाकर वह सामर्थ्य-भर आशीर्वाद देते। जब एक कूल्हा दर्द करने लगता, तो दूसरी तरफ़ ज़ोर डालने के लिए थोड़ा-सा कसमसाते और इसमें अगर कहीं कुरसी ने खाल दाब ली, तो तीन-चार मिनिट लगातार कुरसी को गालियाँ देते रहते। लगे हाथों ननकू हलवाई को भी कोसते, जिसने प्याऊ के लिए यह कुरसी दी थी।

तब छोटे महराज की उमर कोई ख़ास नहीं थी, यही 35-36 के क़रीब रही होगी। छोटे महराज के बाप-दादा सोने-चांदी का काम करते थे। काफ़ी पुराना घर था, दूकान थी। पर जब बाप मरे, तो छोटे की उमर बहुत कम थी। माँ पहले ही स्वर्ग सिधार चुकी थीं। बाप के मरने के बाद दूर के रिश्ते की एक चाची आकर सब देखभाल करने लगीं। फिर बहुत बड़ी-सी चोरी हुई और छोटे का घर तबाह हो गया। चाची को तीरथ की सूझी, तो छोटे को साथ लेकर चल दीं। खर्चे की ज़रूरत पड़ने पर एक मुख़्तार से जब-तब रुपए मँगवाती रहीं। छोटे साथ थे, सो रसीद भेजते रहे। आख़िर जब तीरथ से वापस आए, तब पाँच-छह बरस मकान में और रहना हुआ। फिर मुख़्तार ने मूल और ब्याज के बदले एक दिन मकान कुर्क करा लिया, गवाही में छोटे के हाथ की रसीदें पेश कर दीं और औने-पौने में मकान झाड़ दिया। तब से उनकी चाची ने जनाने और अस्पताल में नौकरी कर ली और छोटे बिस्किटों का ठेला लगाने लगे और घूम-घूमकर बाज़ार की सड़कों पर चीखने लगे - 'एक पैसे में पचास, पचास बिस्किट इनाम ज़ितना लगाओगे, उतना पाओगे -'

ठेले में मैदे के छोटे-छोटे बिस्किटों का ढेर लगा रहता। एक कोने पर एक बड़ी-सी फिरकनी रखी रहती, जिस पर नंबर के खाने बने रहते और उस पर एक सुई नाचती रहती। जब कोई पैसा लगाकर घुमानेवाला न मिलता, तो खड़े-खड़े स्वयं घुमाते रहते, जितना नंबर आता, उतने बिस्किट गिनते और फिर ढेर में डालकर अनाज की तरह रोरते रहते। कभी करारे-करारे बीस-पचीस छाँट लेते, सुई घुमाते, अंटी से एक पैसा निकालकर पैसा रखनेवाले फूल के कटोरे में झन्न से मारते और जितना नंबर आता, उतने गिनकर, बाकी ढेर के सुपुर्द कर जलपान कर लेते।

लेकिन इस तरह कैसे पेट पलता। फिर एक होम्योपैथिक डॉक्टर की दूकान को रोज़ सुबह खोलने तथा झाड़ने-पोंछने का काम ले लिया। दो-चार घरों का पानी बाँध लिया। तड़के उठकर चार-चार डोल खींचकर डाल आते और डॉक्टर की दूकान की सफ़ाई आदि करके कोने में पड़े मोढ़े पर इज़्ज़त से दोपहर तक बैठे रहते। डॉक्टर साहब की अनुपस्थिति में मरीज़ों के हालचाल पूछ लेते। कुछ देसी दवाइयों के नुस्खे बताते और जर्मन दवाइयों की अहमियत समझाते।

तभी से छोटे अपने को बहुत-कुछ, एक छोटा-मोटा वैद्य समझने लगे थे। मरीज़ की दशा देखते ही रोग का ऐलान कर देते। तमाम रोगों के इलाज पर उन्होंने दखल जमा लिया था। जब मोतियाबिंद हो जाने के कारण डॉक्टर साहब को दूकान बंद कर देनी पड़ी, तो छोटे अपनी कोठरी में ही एक छोटा-सा औषधालय खोलने का मन्सूबा बाँधने लगे। रतनलाल अत्तार के यहाँ से आठ-दस आने की जड़ी-बूटियाँ भी बँधवा लाए,

जिन्हें घोंट-पीस और कपड़छन करके सफ़ेद शीशियों में भरा और ताक में सजा दिया। फ़सली बुखार, हरे-पीले दस्त, नाक-कान-सिर-दर्द की हुक्मी दवाइयाँ बाँटने का ऐलान भी कर दिया। पर गली के परिवारों का सहयोग न मिलने के कारण उन्होंने इस नेक इरादे को छोड़ दिया। सारी हकीमी दवाइयों को थोड़ा-थोड़ा करके चूरन की पुड़ियों में मिलाकर उन्होंने आख़िर अपने पैसे सीधे कर लिए।

इस तरह के न जाने कितने घरेलू धंधे उन्होंने चलाए। जन्म से वैश्य होते हुए भी प्रकृति से परोपकारी होने के कारण उन्हें ब्राह्मणत्व भी प्राप्त करना ही था। इसीलिए जब गली-टोले के लड़कों ने उन्हें प्याऊ पर बैठते देखा और चमकदार काली पीठ पर जनेऊ दिखाई पड़ा, वे वंशगत भावनाओं से अनजान, कर्मगत संस्कारों के आधार पर उन्हें महराज पुकारने लगे। तभी से छोटेलाल छोटे महराज हो गए।

जिस इमली के नीचे वह बैठते थे, उस पर दैव की कृपा से महूक ने छत्ता धर लिया, तो एक दिन अंधियारे पाख में जाकर स्टेशन के पास से एक कंजर पकड़ लाए। छत्ता बटाई पर तै हो गया। पर छोटे महराज शहद का क्या करते। चलते वक़्त उसे कस दिया कि आधे दाम कल आ जाएँ। पर महीना-भर टल गया। झोंपड़ी पर तगादा करने पहुँचे। नगद पैसे तो मिले नहीं, अच्छी-ख़ासी डाँट लगाकर पैसों के बदले में तोता छाँट लिया। कंजर ने मिन्नत की कि तीनों तोते पेशगी दामों के हैं, इस बार जाएगा तो उनके लिए भी पकड़ लाएगा। पर छोटे न माने, दो-चार गालियाँ सुना दीं, तैश में बोले, "मेरे पैसे क्या हराम के थे, वह भी तो पेशगी में से ही हैं, ला निकाल जल्दी इस टुइयाँ को।" और तभी से यह तोता उनके पास है, जिसे जान की तरह चिपकाए रहते हैं।

शिवराज ने प्रसन्नता से उन्हें देखा। 'पालांगे महाराज' कहकर बोला, "इधर निकल आएँ महाराज, बहुत जगह है।"

जब वह पास आकर बैठ गए तो उसने पूछा, "झाँसी किस्के यहाँ गए थे?" "यहीं एक ब्याह था, उसमें आए थे, आना पड़ा अ़पनी कहो लेकिन देख, पहचान कैसा। नज़र कमज़ोर है लला, पर अपने गली-कूचे के पले लोगों की तो महक बहुत अच्छी होती है. . ." और वे धीरे-धीरे गरदन हिलाने लगे। उँगलियों के बीच गोली अब भी नाच रही थी और पिंजरे में बैठा संतू गोली के लालच से मुँह खोलता, आँखें बंद करता, पर बोलता नहीं था।

"बदन तो तुम्हारा एकदम लटक गया है, पहले से चोथाई भी नहीं रहा..." शिवराज बोला। उसे कुछ दु:ख-सा हो रहा था, जब उसने पिछली मरतबा देखा था, तब कितने हट्टे-कट्टे थे। यों उमर का उतार तो था, पर इतना फ़र्क तो बहुत है। भला उमर

बने-बनाए आदमी को इतनी जल्दी भी तोड़ सकती है! गाड़ी की चाल धीमी पड़ गई। छोटे महराज ने संतू के पिंजरे को तनिक ऊपर उठाया। उसकी ओर प्यार-भरी दृष्टि से निहारते रहे। तोता कुछ बोला। छोटे महराज के मुख पर मुसकान दौड़ गई। बड़े स्नेह से पुचकारते हुए शिवराज को बताने लगे, "इसका नाम संतू है! यानी संत ज़ब बोले तो बानी बोले, हाँ, संत बानी सित्तिाराम!" इतना कहते-कहते वे अपनी ही बात में डूब गए।

गाड़ी रुकी, कोई मामूली-सा स्टेशन था। छोटे महराज ने पेट पर हाथ फेरा और सिर हिलाते हुए बोले, "देखो शिब्बू, कुछ खाने-पीने का डौल है यहाँ?" मिठाईवाला पास से गुज़रा, शिवराज ने रोक लिया। छोटे महराज बोले, "कुछ ठीक-ठाक हो तो पाव-आध पाव...

मिठाई लेकर पैसे शिवराज ने दे दिए। दोनों हाथों में दोना पकड़कर शिवराज के सामने करते हुए वह बोले, "लो शिब्बू, चखो तो ज़रा, अच्छी हो तो पाव-भर और ले लो।"

और इससे पहले कि शिवराज चखे, उन्होंने खुद पोपले मुँह में एक टुकड़ा डालते हुए अपनी राय प्रकट कर दी, "है तो अच्छी बुलाओ उसे।"

शिवराज को बात कसक गई। वह चुप ही बैठा रहा। झाँककर मिठाईवाले को बुलाने की कोई दिखावटी चेष्टा भी उसने नहीं की। पर जैसे ही मिठाईवाला फिर गुज़रा, उनकी दृष्टि पड़ गई। उसे रोकते हुए बोले, "हाँ भाई, ज़रा पाव-भर और देना तो।" फिर शिवराज की ओर मुख़ातिब होकर बोले, "ले लो, शिब्बू असल में बात यह है कि मुझसे अब कोई ऐसी-वैसी चीज़ तो खाई नहीं जाती, दाँत ही नहीं रहे। खोया-वोया थोड़ा आसान रहता है न।" कहकर उन्होंने निष्काम भाव से खाना शुरू कर दिया।

पैसे उसने फिर दे दिए। खाते समय छोटे महराज का निरीह-सा मुँह और एकदम सट जानेवाले जबड़े देखकर उसे रहम आ गया। उनकी झुकी गरदन, बार-बार पलकों का झपकना और ज़रा-ज़रा करके खाना, जैसे सारे कार्य और तन की सारी भाव-भंगिमाओं में लाचारी थी। उन्होंने एक टुकड़ा पिंजरे में डाल दिया। तोते ने खा लिया। पुचकारते हुए उन्होंने फिर एक टुकड़ा डाल दिया। वे स्वयं खाते रहे और संतू को खिलाते रहे। फिर बात चल निकली और उसी के मध्य उनका स्टेशन भी आ गया।

स्टेशन से बाहर आने पर शिवराज और छोटे महराज एक ही इक्के में बैठ गए। दो सवारियाँ और हो गईं। इक्का चला तो हचकोला लगा। छोटे महराज अपने तोते के पिंजरे को पटरे से बाहर लटकाए किसी तरह बैठे रहे। अस्पताल के पास वह इक्के से उतर पड़े। संतू का पिंजरा पटरी पर रख दिया और झोले में से कुछ निकालते हुए कहने

लगे, "मैं यहीं उतर जाता हूँ। चाची को ब्याह का हालचाल बताकर कोठरी पर आऊँगा! हाँ, तुमसे एक काम है। ये एक कपड़ा है सिलक का, वहीं शादी में मिला था। मेरे तो भला क्या काम आएगा, तुम अपने काम में ले आना!" बात खतम करते-करते वह कपड़ा झोले से निकालकर शिवराज की गोद में रख दिया।

शिवराज ने लेने से इनकार कर दिया। पर वे नहीं माने। शिवराज भी नहीं माना, तो बड़े झुंझलाकर कपड़ा इक्के में फेंककर संतू का पिंजरा, झोला और सोंटा लेकर बड़बड़ाते चल दिए, "अरे पूछो मेरे किसी काम का हो तो एक बात भी है। ज़िंदगी-भर में एक चीज़ दी, उससे भी इनकार सब वक्त की बातें हैं, रहम दिखाते हैं मुझ पर, तेरे बाप होते तो अभी इसी बात पर चटख जाती।" फिर मुड़कर ऊँचे स्वर में बोले, "पैसे नहीं हैं मेरे पास, इक्केवाले को दे देना।" और वे जनाने अस्पताल के फाटक में गुम हो गए।

दूसरे दिन सवेरे छोटे महराज अपनी कोठरी में दिखाई दिए। देहरी पर बैठे-बैठे कराह रहे थे। कभी-कभी बुरी तरह से खाँस उठते। साँस का दौरा पड़ गया था। गली से शिवराज निकला तो पिछले दिन वाली बात के कारण उसकी हिम्मत कुछ कहने की नहीं पड़ी। सोचा कतराकर निकल जाए, पर पैर ठिठक रहे थे। तभी हाँफते-हाँफते छोटे महराज बोले, "अरे शिब्बू!" फिर कराहकर टुकड़े-टुकड़े करके कहने लगे, "दौरा पड़ गया है, कल रात से, हाँ, अब कौन देखे संतू को। बड़ी ख़राब आदत है इसकी, गरदन सलाख से बाहर कर लेता है। रात-भर बिल्ली चक्कर काटती रही, बेटा। छन-भर को पलक नहीं लगी। अपने होश-हवास ठीक नहीं तो कौन रखवाली करे इसकी। अपने घर रख लो, बेफ़िकर हो जाऊँ।"

और इतना कहकर बुरी तरह हाँफने लगे। गले में कफ़ घड़घड़ा आया, तो औंधे होकर लेट रहे। पीठ बुरी तरह उठ-बैठ रही थी। शिवराज 'अच्छा' कहकर पिंजरा उठाकर चलने लगा, तोते को एक बार पूरी आँख खोलकर उन्होंने ताका। उनकी गंदली-गंदली आँखों में एक अजीब विरह-मिश्रित तृप्ति थी। जैसे किसी बूढ़े ने अपनी लड़की विदा कर दी हो। सिर नीचा करके उन्होंने एक गहरी साँस खींची, जैसे बहुत भारी ऋण से उऋण हो गए हों।

तीन-चार दिन हो गए थे। छोटे महराज की हालत ख़राब होती जा रही थी। अकेले कोठरी में पड़े रहते। कोई पास बैठनेवाला भी नहीं था। चौथे दिन हालत कुछ ठीक नज़र आई। सरककर देहरी तक आए। घुटनों पर कोहनियाँ रखे और हथेलियों से सिर को साधे कुछ ठीक से बैठे थे। कभी कराह उठते, धाँस लगती तो खाँस उठते। पर उनके

चेहरे पर अथाह शोक की छाया व्याप रही थी, जैसे किसी भारी गम़ में डूबे हों। उनकी आँखों में कुछ ऐसा भाव था, जैसे किसी ने उन्हें गहरा धोखा दिया हो, उनके कानों में बार-बार संतू की वह आवाज़ गूँज रही थी, जो उन्होंने दोपहर सुनी थी।

दोपहर संतू की कातर आवाज़ जब शिवराज के बरोठे से सुनाई दी तो वे घबरा गए थे कि कहीं बिल्ली की घात तो नहीं लग गई। बड़े परेशान रहे, पर उठना तो बस में नहीं था। शिवराज के घर की ओर बहुत देर आस लगाए रहे कि कोई निकले, तो पता चले। काफ़ी देर बाद मनुआ तोते के दो-तीन हरे-हरे पंखों का मुकुट बनाए माथे से बाँधे, दो-तीन बच्चों के साथ खेलता दिखाई पड़ा, देखते ही सनाका हो गया। संतू की पूँछ के लंबे-लंबे पंख! किसी तरह बुलाकर पूछा तो पता चला कि मुनुआ को राजा बनना था, सो उसने संतू की पूँछ पकड़ ली। बात की बात में दो-तीन पंख नुच आए।

छोटे महराज का जैसे सारा विश्वास उठ गया। ये लड़का तो उसे मार डालेगा! इस वक़्त तबीयत कुछ ठीक मालूम हुई, बड़ी मुश्किल से उन्होंने अपना डंडा पकड़ा, हिलते-काँपते शिवराज के बरोठे में पहुँचे और अपना तोता वापस माँग लाए। कोठरी में आकर उसकी बूची पूँछ देखते रहे, पर मुँह से कुछ बोले नहीं। संतू को पुचकारा तक नहीं।

शाम हो आई थी। तिराहे पर लालटेन जल गई थी। पूरी गली में उदास अंधियारा भरता जा रहा था। उन्होंने संतू के पिंजरे को भीतर रखकर कोठरी के दरवाज़े उढ़का लिए और फिर नहीं निकले। भीतर कुछ देर तक खुट-पुट करते रहे, फिर रात भर कोई आवाज़ नहीं आई।

सवेरे शिवराज उधर से निकला तो कोठरी की ओर निगाह डाली।

दरवाज़े उसी तरह भिड़े थे। उसने धीरे से खोलकर झाँका, देखा महराज सो रहे थे। चुपचाप धीरे से दरवाज़ा बंद करने लगा, तो गली के रामनरायन बोल पड़े, "क्यों, आज नहीं उठे महराज अभी तक?"

और इतना कहते-कहते उन्होंने पूरे दरवाज़े खोल दिए। दोनों ने ग़ौर से देखा, तोते का पिंजरा सिरहाने रखा था, जिस पर कपड़ा था कि कहीं बिल्ली की घात न लग जाए, परंतु छोटे महराज का पिंजरा खाली पड़ा था, पंछी उड़ गया था।

छोटे महराज ने स्वयं तो नहीं पढ़ा था, पर रामलीला आदि में सुनने के कारण यह उनका पक्का विश्वास था कि अंतिम काल में यदि राम का नाम कानों में पड़ जाए तो

मुक्ति मिल जाती है। पता नहीं, उनके अंतिम क्षणों में भी संतू तोते की वाणी फूटी थी या नहीं।

मिठाईवाला पास से गुज़रा, शिवराज ने रोक लिया। छोटे महराज बोले, "कुछ ठीक-ठाक हो तो पाव-आध पाव. . ."

मिठाई लेकर पैसे शिवराज ने दे दिए। दोनों हाथों में दोना पकड़कर शिवराज के सामने करते हुए वह बोले, "लो शिब्बू, चखो तो ज़रा, अच्छी हो तो पाव-भर और ले लो।"

और इससे पहले कि शिवराज चखे, उन्होंने खुद पोपले मुँह में एक टुकड़ा डालते हुए अपनी राय प्रकट कर दी, "है तो अच्छी बुलाओ उसे।" शिवराज को बात कसक गई। वह चुप ही बैठा रहा। झाँककर मिठाईवाले को बुलाने की कोई दिखावटी चेष्टा भी उसने नहीं की। पर जैसे ही मिठाईवाला फिर गुज़रा, उनकी दृष्टि पड़ गई। उसे रोकते हुए बोले, "हाँ भाई, ज़रा पाव-भर और देना तो।" फिर शिवराज की ओर मुख़ातिब होकर बोले, "ले लो, शिब्बू असल में बात यह है कि मुझसे अब कोई ऐसी-वैसी चीज़ तो खाई नहीं जाती, दाँत ही नहीं रहे। खोया-वोया थोड़ा आसान रहता है न।" कहकर उन्होंने निष्काम भाव से खाना शुरू कर दिया।

पैसे उसने फिर दे दिए। खाते समय छोटे महराज का निरीह-सा मुँह और एकदम सट जानेवाले जबड़े देखकर उसे रहम आ गया। उनकी झुकी गरदन, बार-बार पलकों का झपकना और ज़रा-ज़रा करके खाना, जैसे सारे कार्य और तन की सारी भाव-भंगिमाओं में लाचारी थी। उन्होंने एक टुकड़ा पिंजरे में डाल दिया। तोते ने खा लिया। पुचकारते हुए उन्होंने फिर एक टुकड़ा डाल दिया। वे स्वयं खाते रहे और संतू को खिलाते रहे। फिर बात चल निकली और उसी के मध्य उनका स्टेशन भी आ गया।

स्टेशन से बाहर आने पर शिवराज और छोटे महराज एक ही इक्के में बैठ गए। दो सवारियाँ और हो गईं। इक्का चला तो हचकोला लगा। छोटे महराज अपने तोते के पिंजरे को पटरे से बाहर लटकाए किसी तरह बैठे रहे। अस्पताल के पास वह इक्के से उतर पड़े। संतू का पिंजरा पटरी पर रख दिया और झोले में से कुछ निकालते हुए कहने लगे, "मैं यहीं उतर जाता हूँ। चाची को ब्याह का हालचाल बताकर कोठरी पर आऊँगा! हाँ, तुमसे एक काम है। ये एक कपड़ा है सिलक का, वहीं शादी में मिला था। मेरे तो भला क्या काम आएगा, तुम अपने काम में ले आना!" बात खतम करते-करते वह कपड़ा झोले से निकालकर शिवराज की गोद में रख दिया।

शिवराज ने लेने से इनकार कर दिया। पर वे नहीं माने। शिवराज भी नहीं माना, तो बड़े झुंझलाकर कपड़ा इक्के में फेंककर संतू का पिंजरा, झोला और सोंटा लेकर बड़बड़ाते चल दिए, "अरे पूछो मेरे किसी काम का हो तो एक बात भी है। ज़िंदगी-भर में एक चीज़ दी, उससे भी इनकार सब वक्त की बातें हैं, रहम दिखाते हैं मुझ पर, तेरे बाप होते तो अभी इसी बात पर चटख जाती।"

फिर मुड़कर ऊँचे स्वर में बोले, "पैसे नहीं हैं मेरे पास, इक्केवाले को दे देना।" और वे जनाने अस्पताल के फाटक में गुम हो गए।

दूसरे दिन सवेरे छोटे महराज अपनी कोठरी में दिखाई दिए। देहरी पर बैठे-बैठे कराह रहे थे। कभी-कभी बुरी तरह से खाँस उठते। साँस का दौरा पड़ गया था। गली से शिवराज निकला तो पिछले दिन वाली बात के कारण उसकी हिम्मत कुछ कहने की नहीं पड़ी। सोचा कतराकर निकल जाए, पर पैर ठिठक रहे थे। तभी हाँफते-हाँफते छोटे महराज बोले, "अरे शिब्बू!" फिर कराहकर टुकड़े-टुकड़े करके कहने लगे, "दौरा पड़ गया है, कल रात से, हाँ, अब कौन देखे संतू को। बड़ी ख़राब आदत है इसकी, गरदन सलाख से बाहर कर लेता है। रात-भर बिल्ली चक्कर काटती रही, बेटा। छन-भर को पलक नहीं लगी। अपने होश-हवास ठीक नहीं तो कौन रखवाली करे इसकी। अपने घर रख लो, बेफ़िकर हो जाऊँ।"

और इतना कहकर बुरी तरह हाँफने लगे। गले में कफ़ घड़घड़ा आया, तो औंधे होकर लेट रहे। पीठ बुरी तरह उठ-बैठ रही थी। शिवराज 'अच्छा' कहकर पिंजरा उठाकर चलने लगा, तोते को एक बार पूरी आँख खोलकर उन्होंने ताका। उनकी गंदली-गंदली आँखों में एक अजीब विरह-मिश्रित तृप्ति थी। जैसे किसी बूढ़े ने अपनी लड़की विदा कर दी हो। सिर नीचा करके उन्होंने एक गहरी साँस खींची, जैसे बहुत भारी ऋण से उऋण हो गए हों।

तीन-चार दिन हो गए थे। छोटे महराज की हालत ख़राब होती जा रही थी। अकेले कोठरी में पड़े रहते। कोई पास बैठनेवाला भी नहीं था। चौथे दिन हालत कुछ ठीक नज़र आई। सरककर देहरी तक आए। घुटनों पर कोहनियाँ रखे और हथेलियों से सिर को साधे कुछ ठीक से बैठे थे। कभी कराह उठते, धाँस लगती तो खाँस उठते। पर उनके चेहरे पर अथाह शोक की छाया व्याप रही थी, जैसे किसी भारी गम में डूबे हों। उनकी आँखों में कुछ ऐसा भाव था, जैसे किसी ने उन्हें गहरा धोखा दिया हो, उनके कानों में बार-बार संतू की वह आवाज़ गूँज रही थी, जो उन्होंने दोपहर सुनी थी।

दोपहर संतू की कातर आवाज़ जब शिवराज के बरोठे से सुनाई दी तो वे घबरा गए थे कि कहीं बिल्ली की घात तो नहीं लग गई। बड़े परेशान रहे, पर उठना तो बस में नहीं था। शिवराज के घर की ओर बहुत देर आस लगाए रहे कि कोई निकले, तो पता चले। काफ़ी देर बाद मनुआ तोते के दो-तीन हरे-हरे पंखों का मुकुट बनाए माथे से बाँधे, दो-तीन बच्चों के साथ खेलता दिखाई पड़ा, देखते ही सनाका हो गया। संतू की पूँछ के लंबे-लंबे पंख! किसी तरह बुलाकर पूछा तो पता चला कि मुनुआ को राजा बनना था, सो उसने संतू की पूँछ पकड़ ली। बात की बात में दो-तीन पंख नुच आए।

छोटे महराज का जैसे सारा विश्वास उठ गया। ये लड़का तो उसे मार डालेगा! इस वक़्त तबीयत कुछ ठीक मालूम हुई, बड़ी मुश्किल से उन्होंने अपना डंडा पकड़ा, हिलते-काँपते शिवराज के बरोठे में पहुँचे और अपना तोता वापस माँग लाए। कोठरी में आकर उसकी बूची पूँछ देखते रहे, पर मुँह से कुछ बोले नहीं। संतू को पुचकारा तक नहीं।

शाम हो आई थी। तिराहे पर लालटेन जल गई थी। पूरी गली में उदास अंधियारा भरता जा रहा था। उन्होंने संतू के पिंजरे को भीतर रखकर कोठरी के दरवाज़े उढ़का लिए और फिर नहीं निकले। भीतर कुछ देर तक खुट-पुट करते रहे, फिर रात भर कोई आवाज़ नहीं आई।

सवेरे शिवराज उधर से निकला तो कोठरी की ओर निगाह डाली। दरवाज़े उसी तरह भिड़े थे। उसने धीरे से खोलकर झाँका, देखा महराज सो रहे थे। चुपचाप धीरे से दरवाज़ा बंद करने लगा, तो गली के रामनरायन बोल पड़े, "क्यों, आज नहीं उठे महराज अभी तक?"

और इतना कहते-कहते उन्होंने पूरे दरवाज़े खोल दिए। दोनों ने ग़ौर से देखा, तोते का पिंजरा सिरहाने रखा था, जिस पर कपड़ा था कि कहीं बिल्ली की घात न लग जाए, परंतु छोटे महराज का पिंजरा खाली पड़ा था, पंछी उड़ गया था।

छोटे महराज ने स्वयं तो नहीं पढ़ा था, पर रामलीला आदि में सुनने के कारण यह उनका पक्का विश्वास था कि अंतिम काल में यदि राम का नाम कानों में पड़ जाए तो मुक्ति मिल जाती है। पता नहीं, उनके अंतिम क्षणों में भी संतू तोते की वाणी फूटी थी या नहीं।

https://www.hindiadda.com/kasabe-ka-aadami/